योग्य है पहली तो यह कि कृष्ण बिहारी जी इतने निर्भीक लेखक थे कि अपने भाषाई मतादर्श के लिए अपने समय के शीर्ष पत्रकार प्रभाष जी को खुलेआम चुनौती दी थी। दूसरी यह की प्रभाष जी की भाषा सम्बंधी यह अवधारणा कि भाषा को आम जनता के स्तर पर पहुंच कर सरल, सहज और सम्प्रेषणीय होनी चाहिए, इतनी पुख्ता थी कि उन्हें इसके लिए अपने आलोचकों की दृष्टि की परवाह नहीं थी।

कृष्ण बिहारी जी की वजह से वरिष्ठ कथाकार और मुझे पुत्रवत मानने वाली डॉ.सुकीर्ति गुप्ता ने मेरा कान सार्वजनिक तौर पर ऐंठ दिया था। हुआ यह था कि एक समारोह में महाश्वेता देवी और सुकीर्ति जी वक्ता थे। मैं जनसत्ता के लिए रिपोर्टिंग कर रहा था। व्याख्यान का विषय महिलाओं से जुड़ा हुआ था। मैंने महाश्वेता दी को ही इंट्रो में जगह दी थी और हेडिंग भी महाश्वेता जी के वक्तव्य की थी। सुकीर्ति जी इससे नाखुश थीं और उनका मानना था कि हिन्दी के अखबार में हिन्दी की लेखिका को तरजीह देनी चाहिए, जिससे मैं सहमत नहीं था। दूसरे यह कि सुकीर्ति जी ने यह भी कहा था कि 'महिलाओं को अपने सौंदर्य पर भी ध्यान देना चाहिए और दोपहर में थोड़ी देर झपकी ले लेनी चाहिए जिससे उसके सौंदर्य में इजाफा होगा।'

समाचार पढ़ने के बाद कृष्ण बिहारी जी ने सुकीर्ति जी को फोन कर परिहास में कहा कि 'आपके दोपहर में झपकी लेने वाले सुझाव पर मैं अनजाने अमल कर रहा था।' फिर क्या था सुकीर्ति जी ने जनसत्ता में श्याम आचार्य जी को फोन कर दिया कि अभिज्ञात को मेरी यही बात मिली लिखने के लिए। मिलेगा तो मैं उसे पीटूंगी। आचार्य जी ने मुझे सतर्क कर दिया था। फिर क्या था, जिस किसी कार्यक्रम में सुकीर्ति जी वक्ता रहतीं मैं वह असाइनमेंट नहीं लेता था। लेकिन तब बुरा फंस गया जब मोहन राकेश के पत्र पर आधारित एक नाटक का निर्देशन मेरे प्रिय रंगकर्मी विमल लाठ जी ने किया। मैं ज्ञानमंच में नाटक देखने पहुंचा तो प्रवेश स्थल पर ही सुकीर्ति जी मिल गयीं और सरेआम मेरा कान पकड़ कर उमेठ दिया। सुकीर्ति जी मेरी पीएचडी की शोध निर्देशिका डॉ.इलारानी सिंह को पढ़ा चुकी थीं। सो मेरी गुरु की गुरु थीं। और बाद में मुझे ताउम्र स्नेह देती रहीं। लेकिन यह कान उमेठने की सजा का श्रेय मैं कृष्णबिहारी जी के खाते में ही रखता आया हूं। कृष्ण बिहारी जी के अंतिम दर्शन 'संकल्प सृष्टि' के सम्मान समारोह में गत वर्ष हुए। सौभाग्य से सम्मानित साहित्यकारों के चयनकर्ताओं में मैं भी था। शारीरिक कमजोर स्थिति के बावजूद संस्था के प्रधान सचिव अविनाश कुमार गुप्ता उन्हें आयोजन में लाने में कामयाब हुए थे और अब तक यह संस्था की भी एक उपलब्धि है।

भारतीय संस्कृति और परंपरा के संवाहक

कृष्णबिहारी मिश्र जी अपनी धरती और बोली-बानी से उसी तरह जुड़े थे जिस तरह किसी संतान का जुड़ाव अपनी मां से होता है। सचमुच वे गंवई संवेदना के लेखक थे जिनकी 'जड़ें तो गाँव में थी पर शाखाएँ और समर (फल) शहर में'। वे परंपरानिष्ठ होने के साथ अपने समय और सभ्यता की गतियों के प्रति भी सचेत थे। उनमें देशजता और सार्वभौमिकता, भारतीयता और आधुनिकता के युग्म को बखूबी देखा जा सकता है।

श्रीपर्णा तरफदार

लोक से अविच्छिन्न एवं गहरा संबंध रखने वाले कृष्णबिहारी मिश्र जी का जाना हिंदी की एक पीढ़ी का समाप्त होना है। छह मार्च 2023 को रात्रि साढ़े बारह बजे इस सारस्वत साधक ने 92 साल की उम्र में कोलकाता के बेलियाघाटा स्थित अपने आवास स्थल में अंतिम सांस ली। मेरा और उनका संबंध कुछ ही वर्षों का था, परंतु उनकी आत्मीयता एवं ममत्व ने मुझे हमेशा यही एहसास दिलाया कि उनके साथ मेरा संबंध बहुत पुराना है। जब भी उनसे बात हुई, चाहे वो फोन पर हो या आमने-सामने, मेरे मन में हमेशा यही बात आई कि इस अनात्मीय समय में उन जैसा आत्मीय विरल है।

जैसी देशी सरलता उनके व्यक्तित्व में थी, वैसी सरलता उनके कृतित्व में भी झलकती है। वे अपने समय के अत्यंत पारखी लेखक थे। भारतीय परंपरा, संस्कृति, धर्म एवं मानवीय मूल्यों को तरजीह देने वाले कृष्णबिहारी मिश्र जी अपनी सृजनशीलता की उजास में सदैव इनके संरक्षक बने रहे। उनकी दृष्टि हर उस गिरावट की ओर गई जिसने भारतीय समाज को एक तरह से विकलांग बनाया है, चाहे वो विद्या जगत की रिक्तता हो, स्वार्थ-प्रिय, आत्मकेंद्रित मनुष्य हो या कृत्रिम आधुनिकता के आपाधापी का शिकार ग्रामीण जन-जीवन हो। उनकी रचनाओं का दायरा विस्तृत है। पत्रकारिता, विनिबंध, ललित निबंध, साहित्येतिहास, संस्मरण, जीवन-प्रसंग, हर विषय में न केवल उनकी गहरी पैठ को देखा जा सकता है अपितु उनकी रचनाएं आस्था की अपराजेयता को रेखांकित करती हैं। कहना न होगा कि उनकी रचनाओं में लोकानुभूति, तन्मयता और मनुष्यता की मनोकामना है। उनकी रचनाएं बदलते समय के साथ नई मूल्य चेतना की लौ जलाते हुए दिशा दिखाती हैं।

कृष्णबिहारी मिश्र जी अपनी धरती और बोली-बानी से उसी तरह जुड़े थे जिस तरह किसी संतान का जुड़ाव अपनी मां से होता है। सचमुच वे गंवई संवेदना के लेखक थे जिनकी 'जड़ें तो गाँव में थी पर शाखाएँ और समर (फल) शहर में'। वे परंपरानिष्ठ होने के साथ अपने समय और सभ्यता की गतियों के प्रति भी सचेत थे। उनमें देशजता और सार्वभौमिकता, भारतीयता और आधुनिकता

yugwarta.com facebook.com/yugwarta twitter.com/yugwarta

16-31 मार्च, 2023 ₹100

ISSN 2457- 080X

युगवार्ता

पाक्षिक

मनीषी साहित्यकार